राष्ट्रीय

किसान राजनीति के दो बदनुमा दाग- अकाली दल और जेजेपी

यूसुफ किरमानी

किसान आंदोलन में दो सबसे बड़े अवसरवादी चेहरे सामने आये हैं।

ये हैं- पंजाब का अकाली दल और हरियाणा की जननायक जनता पार्टी (जेजेपी)। दोनों दल अब किसानों के मुद्दे पर मसीहा बनने को उतावले नज़र आ रहे हैं।

देश के किसानों के खिलाफ जब तीनों काले कानून का बिल सबसे पहले लोकसभा में लाया गया था तो अकाली दल सुप्रीमो प्रकाश सिंह बादल की बहू हरसिमरत कौर बादल केंद्रीय मंत्री थीं।

उन्होंने एक बार भी इस बिल के खिलाफ नहीं बोला और न ही कोई संदेह जताया।

उनके ससुर प्रकाश सिंह बादल और पति सुखबीर सिंह बादलभी चुप रहे।

अब प्रकाश सिंह बादल अपना पद्म सम्मान लौटा चुके हैं और बहुत दर्दीली आवाज़ में बातें बना रहे हैं।

पर, यह लोग आख़िर किसको बेवकूफ बनाना चाहते हैं?

यह बात बहुत साफ़ है कि अकाली और भाजपा हमेशा साथ रहे हैं और आगे भी साथ रहेंगे। ये थोड़े समय के लिए किसानों को बेवकूफ बनाकर अपना टाइम पास कर रहे हैं। इनके घड़ियाली आंसुओं पर कोई तरस न खाये। अकाली दल का अब ये कहना कि बीजेपी या प्रधानमंत्री मोदी ने हमसे राय नहीं ली, बहुत बड़ा झूठ है। आपकी जिम्मेदारी थी, उस समय आप लोग बड़े कॉरपोरेट घरानों से आगे की कॉन्ट्रैक्ट फॉर्मिंग पर चर्चा कर रहे थे, अपनी एग्रो कंपनियाँ बनाने पर विचार कर रहे थे। रिलायंस से समझौता कौन करेगा, इसकी ज़मीन तैयार कर रहे थे।

चौटाला और बादल ने घटिया किस्म की किसान राजनीति को बढ़ावा दिया

अब जेजेपी की बात...

हरियाणा की जनता ने पिछले विधानसभा चुनाव में बीजेपी को ख़ारिज कर दिया था।

इस अल्पमत की पार्टी ने जेजेपी से गठबंधन कर राज्य में फिर सरकार बना ली। जबकि चुनाव प्रचार समाप्त होने के आखिरी दिन दुष्यंत चौटाला का भाषण वीडियो में आज भी मौजूद है, जिसमें उन्होंने मोदी और संघ का पूरी ज़िन्दगी विरोध करने की क़समें खाई थीं। हरियाणा के जाटों ने पिछले चुनाव में वोट ही बीजेपी के खिलाफ दिया था। इसी वजह से कांग्रेस और जेजेपी की ठीकठाक सीटें आईं थीं। जेजेपी ने उनका वोट ही बीजेपी और संघ विरोध के नाम पर माँगा था। खट्टर के पिछले कार्यकाल में जाट आंदोलन से सरकार ने कैसे निपटा था, उसे याद था। कांग्रेस से जेजेपी का तालमेल होता इससे पहले दुष्यंत दिल्ली में अमित शाह के आवास पर प्रेस कॉन्फ्रेंस करते नज़र आये। हरियाणा का जाट मतदाता तिलमिला कर रह गया। वो इसे भूला नहीं है।

जेजेपी का संस्थापक अजय चौटाला यानी दुष्यंत चौटाला के पिता अजय चौटाला अपने पिता ओमप्रकाश चौटाला के साथ करप्शन मामले में जेल में थे।

दुष्यंत ने बीजेपी से डील की और पिता अजय चौटाला बाहर आ गये। अजय चौटाला परोल पर बाहर हैं। कोई नहीं जानता कि इस परोल की अवधि कितनी लंबी है।

अजय चौटाला अब कह रहे हैं कि अगर एमएसपी के मामले में किसानों के साथ नाइंसाफ़ी हुई तो मेरा बेटा हरियाणा सरकार के साथ बाहर आ जाएगा। मतलब की जेजेपी सरकार में नहीं रहेगी।

किसानों के लिए ये घड़ियाली आँसू अजय चौटाला और दुष्यंत चौटाला ने अब तक क्यों रोक रखे थे? ज़ाहिर है कि ये भी टाइमपास बयान है। हरियाणा के डिप्टी सीएम का पद छोड़ने के लिए बहुत बड़ा कलेजा चाहिए। परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि अजय चौटाला यह फ़ैसला नहीं ले सकते।

जेजेपी के तीन चार विधायक पार्टी से पहले ही बग़ावत कर चुके हैं। बरोदा उपचुनाव में ज़ोर लगाने के बावजूद जेजेपी अपने सहयोगी दल बीजेपी प्रत्याशी और अंतरराष्ट्रीय पहलवान को नहीं जिता सकी।

जेजेपी का किसानों के हक में अब बोलना अवसरवादिता है। लोकसभा में जब इस बिल को लाया गया तो तब जेजेपी क्यों सो रही थी?

हरियाणा की खट्टर सरकार को समर्थन दे रहे निर्दलीय विधायक सोमबीर सांगवान का किसानों के मुद्दे पर सरकार से समर्थन वापस लेना हरियाणा का मूड बताने को काफ़ी है। सोमबीर सांगवान को खट्टर ने राज्य लाइवस्टाक बोर्ड का चेयरमैन बना रखा था। सोमबीर ने चेयरमैनी छोड़ दी है। सोमबीर का कहना है कि हरियाणा की सारी खाप किसानों के खिलाफ बने तीनों काले कानून के विरोध में हैं। ऐसे में वे कैसे खट्टर सरकार और बीजेपी का समर्थन करें?

अकाली दल और जेजेपी जो घड़ियाली आँसू बहा रहे हैं, दरअसल सोमबीर के बयान से उनकी असलियत और खुलकर सामने आ गई है। हुआ ये है कि किसानों के दम पर अपनी राजनीति चमकाने वाले अकाली दल और जेजेपी के पैरों के नीचे से ज़मीन खिसक चुकी है। इसकी आहट उन्होंने सुन ली है। यही वजह है कि अब किसानों के हमदर्द बनकर सामने आने की कोशिश में जुट गए हैं। पर, ये काम इतना आसान नहीं है। इसीलिए बीजेपी के इशारे पर अकाली और जेजेपी पंजाब-हरियाणा के किसान संगठनों में फूट डालने की कोशिश में साथ-साथ जुटे हैं।

अकालियों का अवसरवाद पहली बार सामने नहीं आया है। भाजपा के हमनिवाला और हमप्याला ये वही पार्टी है जिसके सुप्रीमो प्रकाश सिंह बादल दिल्ली आकर संविधान की प्रतियाँ तक जला चुके हैं। उस समय राष्ट्रवादियों और हिन्दुत्व के खैरख्वाह अटल और आडवाणी बादल की इस हरकत पर चुप रह गए थे। एक बार भी विरोध नहीं किया। जब अटल - आडवाणी नहीं बोले तो तथाकथित देशप्रेमी आरएसएस भला क्यों बोलता। प्रकाश सिंह बादल ने संविधान की प्रतियाँ जलाने की ये हरकत महज उस समय सक्रिय कुछ चरमपंथी गुटों को खुश करने के लिए की थी। लेकिन अकालियों की ये हरकत इतिहास के पन्नों में दर्द है, इसलिए ये तथ्य हमेशा बीजेपी और अकालियों का पीछा करते रहेंगे।

बहरहाल, उम्मीद है कि तमाम किसान संगठनों पर बीजेपी के दायें और बायें बाजू बनी इन दोनों पार्टियों अकाली दल और जेजेपी से सावधान रहेंगे। क्योंकि आरएसएस-बीजेपी भी अपने किसान संघ के नेता से बयान दिलवाकर किसानों से दायें-बायें से फ़र्ज़ी हमदर्दी जता रहे हैं। लेकिन बीजेपी में फ़िलहाल वही होगा जो मोदी और अमित शाह चाहेंगे। कॉरपोरेट और विश्वबैंक की सलाह से बनाये गये तीनों काले क़ानूनों पर मोदी-शाह झुकेंगे, इसकी संभावना क्षीण है।

अकाली, जेजेपी, बीजेपी, आरएसएस इस समय किसानों के मामले में किसी भी हद तक जा सकते हैं, इसलिए किसानों को चौकन्ना रहने की ज़रूरत है। देश में भगवा फासिस्ट क्रोनी कैपिटिलिस्ट ग्रुप (एसएफसीसीजी) बहुत मज़बूत स्थिति में है। ये पूरा समूह ही किसान और देश के लोगों के खिलाफ बनाया गया है। परिस्थितियाँ सचमुच भयावह हैं। हम लोग सजगता और एकजुटता से ही इस समूह का मुक़ाबला कर सकते हैं।

(वरिष्ठ पत्रकार और राजनीतिक विश्लेषक)

श्रम

जमीन से गायब होता ट्रेड यूनियन आन्दोलन राष्ट्रीय, अंतराष्ट्रीय स्तर पर बुलंद

सतीश कुमार

दुनिया भर के मेहनतकश लोग जो विभिन्न प्रकार से अपनी मेहनत बेचकर रोज़ी-रोटी कमाते हैं, अपने हितों की रक्षा के लिये संगठित होकर जो यूनियन बनाते हैं, उसी को ट्रेड यूनियन कहा गया है। इसके रूप विभिन्न व्यवसायों के अनुरूप अलग-अलग हो सकते हैं। कोई बैंकों में कार्यरत हैं तो उनके हित और मांगे उनसे भिन्न होंगी जो सड़क परिवहन से जुड़े हैं; इसी तरह कारखानों में काम करने वालों के हित एवं आवश्यकतायें उनसे भिन्न होंगी जो भवन निर्माण में लगे हैं। लेकिन इसके बावजूद भी ये सब मेहनतकश जो संगठन बनाते हैं, वे ट्रेड यूनियन ही कहलाते हैं।

जब से दुनिया में औद्योगीकरण का आरम्भ हुआ है, कारखानों में मज़दूरी करने के लिये लोग आने लगे हैं। कारखानों में काम करने की विकट परिस्थितियों एवं भयंकर शोषण ने मज़दूरों को संगठित होकर लड़ने के लिये प्रेरित किया। ये संगठन एक कारखाने से शुरू हो कर पूरे शहर, शहर से पूरे देश और एक देश से अन्य देशों तक फ़ैलते चले गये। इसी फ़ैलाव के चलते मज़दूर संगठनों ने न केवल राष्ट्रीय फेडरेशनों का रूप ले लिया बल्कि अंतराष्ट्रीय स्तर पर भी बड़ी-बड़ी फेडरेशन खड़ी हो गयी। इनके भी कई रूप हैं, कोई स्टील एंड इंजीनियरिंग से जुड़ी है तो कोई टेक्स्टाइल से तो कोई माइनिंग से तो कोई जहाजरानी आदि से। इसके अलावा आज इनके राजनीतिक रूप भी अलग-अलग तरह के नज़र आते हैं। कई तरह की कम्युनिस्ट विचारधारायें हैं तो कई तरह की समाजवादी और डेमोक्रेटिक विचारधारायें मौजूद हैं जिनसे ये फ़ेडरेशन जुड़ी हैं।

ट्रेड यूनियन के इस अंतराष्ट्रीय फ़ैलाव की बदौलत यूएनओ में भी आईएलओ (अंतराष्ट्रीय मज़दूर संगठन) के नाम से एक ब्रांच है। इसका उद्देश्य यूएनओ के

जिनकी बदौलत मालामाल हुए उन्हीं विभागों के लोग ट्रेड यूनियन आंदोलन को भूल गये

तमाम सदस्य देशों में मजदूरों के अधिकारों एवं हितों की देखभाल करना तथा श्रम कानूनों की पालना पर निगरानी रखना है। साल -दो साल में आईएलओ द्वारा तमाम देशों के बड़े श्रमिक नेताओं व सरकारी अधिकारियों/मंत्रियों की कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया जाता है। लेकिन यह किसी रस्म अदायगी एवं पाखंड से कम नहीं है क्योंकि इस तरह की कॉन्फ्रेंसों का निहितार्थ केवल नेताओं, मंत्रियों व अफ़सरों की विदेश यात्रा तक ही सीमित होकर रह जाता है। इनसे धरातल पर मौजूद एवं कारखानों व खदानों में दिन-रात खटने वाले मज़दूर को कुछ नहीं मिल पाता। स्थानीय स्तर पर कमज़ोर बल्कि मृत-प्राय:संगठनों के चलते उन पर शोषण का शिकंजा दिन-प्रति दिन कसता जा रहा है। उनकी हालत बद से बद्तर होती जा रही है। इसके पीछे ट्रेड यूनियन एवं फेडरेशन को अफ़सरशाही ढांचा एवं कार्यशैली है। मज़दूर नेता अफ़सरों की भाषा बोलने लगे हैं तथा उनके दफ़्तर सरकारी जैसे हो चले हैं। केन्द्रीय स्तर की इस कार्यशैली का असर काफ़ी हद तक निचले स्तरों तक भी पहुंचना स्वाभाविक है।

धरातल यानी निचले स्तर पर जहां मज़दूरों को सीधे तौर पर संगठन की आवश्यकता होती है वहां संगठन लगभग पूर्णतया निष्प्रभावी हो जाता है। इसके चलते न तो मालिकान श्रम कानूनों की परवाह करते और न ही उन्हें लागू कराने वाली सरकारी मशीनरी। इसमें सरकार का श्रम विभाग पीएफ (भविष्यनिधि)व ईएसआईसी आदि सभी शामिल हैं। कानून है कि स्थाई प्रकृति के काम पर ठेकेदारी श्रमिक नहीं रखे जा सकते परंतु इस कानून का उल्लंघन न केवल कारखानेदार कर रहे हैं बल्कि सरकार खुद भी बड़े पैमाने पर कर रही है। ईएसआईसी के अस्पतालों में आधे से अधिक कर्मचारी ठेकेदारी में काम कर रहे हैं जिनकी संख्या सैकड़ों-हजारों में है। इतना ही नहीं समान काम का समान वेतन का नियम व कानून, जिसकी व्याख्या देश के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी की जा चुकी है कि सरेआम अवहेलना हो रही है। बीते वर्ष तक तो यह अत्याचार ईएसआईसी के अस्पतालों में भी हो रहा था, परन्तु जब उच्चाधिकारियों को कुछ शर्म आई तो ठेकेदारी कर्मचारियों का वेतन भी नियमित कर्मचारियों के बराबर कर दिया गया। सरकारी स्कूलों व कॉलेजों तक में यह भेद-भाव बड़े पैमाने पर चल रहा है। यहां 'ठेकेदारी' शब्द की जगह 'गेस्ट' तथा विजिटिंग जैसे शब्दों का इस्तेमाल किया गया है। कोई भी विषय पढ़ाने वाला एक अध्यापक को लाखों का वेतन मिलता है तो दूसरे को एक चौथाई भी नहीं।

मेहनत बेचने वालों पर यह सब अत्याचार एवं शोषण केवल इस लिये हो पा रहा है कि उनकी सामूहिक सौदेबाज़ी करने की ताकत जो ट्रेड यूनियन के माध्यम से बनती है, वह इतनी क्षीण हो चुकी है कि मेहनत खरीदने वाले उसकी कीमत अपनी मन-मर्जी से लगाने को स्वतंत्र हैं। ट्रेड यूनियन का इतिहास जानने वाले जानते हैं कि स्कूल-कॉलेजों के शिक्षक आज जो लाखों का वेतन पा रहे हैं उसके लिये 1971-72 में, उस वक्त के संगठनों ने कितना कठिन संघर्ष किया था, कितनी कुर्बानियां दी थीं। संगठन के अभाव में वे सब आज मिट्टी में मिल गयी है।

फ़िर से लौटते हैं औद्योगिक मज़दूरों की ओर। इनके हितों के लिये बनाये गये सरकारी प्रतिष्ठान ईएसआई कार्पोरेशन व भविष्यनिधि विभाग जिस तरह से मज़दूरों को प्रताड़ित कर रहा है, उनका शोषण कर रहा है, देखते ही बनता है लेकिन किसी ट्रेड यूनियन की औकात नहीं बची कि इन सब के खिलाफ़ कोई बड़ी मुहिम चला पाये। दुर्भाग्य की बात तो यह है कि इन दोनों प्रतिष्ठानों शीर्ष प्रबन्धन में ट्रेड यूनियनों के प्रतिनिधि भी शामिल हैं। ईएसआई कार्पोरेशन में बतौर पार्षद एक तिहाई नुमाइंदे मज़दूरों के, एक तिहाई मालिकान के व एक तिहाई सरकार के होते हैं। संख्या के हिसाब से सभी पक्षों के लगभग 15-15 नुमाइंदे होते हैं। मजे की बात तो यह है कि ईएसआईसी कार्पोरेशन में सरकार की ओर से कभी एक खोटी चवन्नी भी निवेश नहीं की गयी, सारा पैसा मालिकान और मज़दूरों द्वारा कमा कर दिया गया है। इसके बावजूद लाखों करोड़ों के इस फंड पर सरकारी दादागीरी पूरी तरह से हावी रहती है। मज़दूर प्रतिनिधि जब मुंह नहीं खोलते तो मालिकान को भला क्या जरूरत पड़ी जो सरकार से पंगा ले?

लगभग ऐसे ही हालात भविष्यनिधि विभाग के हैं। दर असल यह विभाग नहीं एक ट्रस्ट है। जिसमें मालिकान व मज़दूरों के नुमाइंदों के साथ-साथ सरकार के भी नुमाइंदे होते हैं। इसमें भी सारा पैसा मज़दूरों व मालिकान का होता है। तमाम सरकारी अमले का वेतन व एय्याशी का खर्चा उन्हीं के दिये अंशदान से चलता है। लेकिन मज़दूरों को अपना जमा कराया पैसा ही इस ट्रस्ट से वापस लेना काफ़ी भारी पड़ता है। विस्तार में न जाकर पाठक इतना ही जान लें कि 27000 करोड़ से भी अधिक की राशि इस ट्रस्ट में ऐसी पड़ी हुई है जिसका कोई लेनदार अथवा दावेदार नहीं है। सीधे शब्दों में कहा जाय तो यह वह राशि है जो मज़दूरों के खून-पसीने की कमाई से सरकार ने वसूल तो कर ली थी लेकिन उन्हें लौटाई नहीं गई; जाहिर है इस रकम को सरकार कभी भी 'राष्ट्रहित' के नाम पर गटक जायेगी।

इसके अलावा एक ओर बड़ा घपला पीएफ़ के नाम पर मालिकान व फंड कर्मचारी यह करते हैं कि मज़दूरों के वेतन से काटा गया पैसा उनके खातों में जमा ही नहीं कराया जाता। भारतीय दंड संहिता की धारा 406 व 420 के तहत होने वाले इस तरह के सैकड़ों अपराधों का कोई संज्ञान नहीं लिया जाता, क्योंकि जिसका पैसा लूटा जाता है उसकी तो कोई सुनता नहीं और विभाग के जिन अधिकारियों द्वारा इस तरह के मुकदमे दर्ज कराये जाने चाहिए वे खा-पी कर चुप रह जाते हैं। इन सब बातों के बावजूद ट्रेड यूनियनों की ओर से कोई भी गम्भीर कदम नहीं उठाये जाते।

(सम्पादक : मजदूर मोर्चा)